मलेरिया पत्रिका

वर्ष 15 अंक 4 दिसम्बर 2007

सम्पादक
प्रो. आदित्य प्रसाद दाश

सहायक सम्पादक
श्री यूरगायला श्रीहरि
डॉ. वन्दना शर्मा

प्रकाशन एवं सज्जा
श्री जितेन्द्र कुमार
श्री दानसिंह सोंटियाल
श्रीमती मीनाक्षी भसीन
श्रीमती आरती शर्मा

विषय सूची

1. सम्पादकीय 3

2. मच्छर नियंत्रण में मेंढक की एक जैविक कारक के रूप में भूमिका 5
डॉ. के. राघवेन्द्र

3. मलेरिया नियंत्रण के विभिन्न आयाम और संस्थान की सोनापुर क्षेत्रीय इकाई की भूमिका 9
डॉ. हरदेव प्रसाद गुप्ता

4. प्रासंगिकी 12
- संस्थान की गतिविधियाँ 12
- क्षेत्रीय इकाइयों में हिन्दी दिवस 13

5. मलेरिया संबंधी देश-विदेश के समाचार 17

पाठकों से

समस्त पाठकों से मलेरिया उन्मूलन संबंधी जानकारी, विशेष शोध-पत्र, कविताएँ, लेख, चुटकले, प्रचार वाक्य इत्यादि आमंत्रित किए जाते हैं।
—सम्पादक

पत्रिका में प्रकाशित लेखों से सम्पादक की सहमति/असहमति होना अनिवार्य नहीं है, इसके लिए लेखक स्वयं जिम्मेदार हैं।

जनहित में प्रकाशित निःशुल्क हिन्दी त्रैमासिक

सम्पादकीय

मलेरिया पत्रिका का वर्ष 2007 का अंतिम अर्थात् दिसम्बर अंक प्रस्तुत करते हुए मुझे हार्दिक प्रसन्नता का अनुभव हो रहा है। इस अंक के साथ ही बीते वर्ष में मच्छरजनित रोगों की ओर यदि हम दृष्टिपात करें तो पाएगें कि भारत के विभिन्न क्षेत्रों में इन रोगों के वर्ष 2006 की अपेक्षा अधिक मामले दर्ज किए गए हैं जिसमें मलेरिया के अलावा चिकनगुनिया, डेंगू, जापानी एन्सेफालिटिस आदि रोग हैं। गत वर्ष के समाचार पत्रों से भी यह बात और अधिक स्पष्ट हो जाती है कि इन मच्छरजनित रोगों के शिकार कई लोग हुए हैं। सरकारी आंकड़ों के अनुसार प्रतिवर्ष मलेरिया रोग के कारण लगभग 1000 मौतें दर्ज की गई हैं।

स्वास्थ्य प्राधिकारियों ने हालांकि कीटनाशकों एवं कीटनाशक संसिक्त मच्छरदानियों के उपयोग द्वारा इन मच्छरजनित रोगों का सामना करने का बहुत अधिक प्रचार-प्रसार भी किया है क्योंकि जब तक इस रोग के विरूद्ध किसी टीके का निर्माण नहीं होता तब तक सुरक्षा का एक मात्र स्त्रोत सावधानी ही है और यह सावधानी अपने स्वास्थ्य के लिए स्वयं अपने द्वारा ही बरती जा सकती है। इसमें सरकारी व गैर-सरकारी प्रयास चाहे कितने भी किए जाएं किन्तु हमारे द्वारा उन पर अमल न करना व असावधानी बरतना इन सभी प्रयासों को धता बता सकता है। वर्ष 2006 में डेंगू व मलेरिया के प्रकोप ने जहां हमें अपने प्रियजनों की पीड़ा एवं तकलीफ से वाकिफ कराते हुए इन रोगों की गंभीरता से परिचित कराया है वहीं काफी हद तक हमें जागरुक एवं सचेत भी किया है। वहीं नहीं जन-जन में इस रोग के लिए अनुकूल परिस्थितियों को समाप्त करने की प्रेरणा जागृत हुई है।

पत्रिका के इस अंक में हमने दो लेख दिए हैं, प्रथम लेख है –'मच्छर नियंत्रण में मेंढक की एक जैविक कारक के रूप में भूमिका'। यह लेख तकनीकी होने के साथ ही जन-मानस को मच्छरजनित

रोगों के एक नियंत्रण उपाय से अवगत कराता है जबकि द्वितीय लेख का उद्देश्य मुख्यत: मलेरिया नियंत्रण उपायों के बारे में जानकारी देना है। उन नियंत्रण उपायों के बारे में जिन्हें संस्थान की क्षेत्रीय इकाई सोनापुर ने अपने क्षेत्र विशेष की भौगोलिक, पर्यावरणीय परिस्थितियों के अनुसार अपनाया है और जनसाधारण को जागरुक किया है। इस लेख को – 'मलेरिया नियंत्रण के विभिन्न आयाम और संस्थान की सोनापुर क्षेत्रीय इकाई की भूमिका' शीर्षक दिया गया है। इसके साथ ही हमारे संस्थान के वैज्ञानिकों द्वारा समय-समय पर संगोष्ठियों, व्याख्यानों और प्रशिक्षण कार्यक्रमों आदि का आयोजन किया जाता है जिनका उद्देश्य मलेरिया के प्रति जनसामान्य से लेकर बुद्धिजीवी वर्ग को जागृत एवं सचेत करना है। वैज्ञानिकों के इस सक्रिय योगदान को 'संस्थान की गतिविधियों' के अन्तर्गत स्थान दिया गया है।

आशा है पत्रिका के इस अंक के लेखों में दी गई विज्ञानीय जानकारियाँ जनसामान्य के लिए मलेरिया ज्ञान का स्त्रोत साबित होंगी। हमें हमेशा आपकी प्रतिक्रियाओं एवं सुझावों को जानने की जिज्ञासा रहती है। आशा है आप अपने विचारों, सुझावों एवं मलेरिया संबंधी देश-विदेश के समाचारों से हमें अवश्य अवगत कराएंगे। आपके सुझाव एवं प्रतिक्रियाएं हमारे लिए प्रेरणा का कार्य करेंगी और हमारे व आपके बीच विचार-संप्रेषण का माध्यम बनेंगी।

आदित्य प्रसाद दाश

मच्छर नियंत्रण में मेंढक की एक जैविक कारक के रूप में भूमिका

डॉ. के. राघवेन्द्र*

हाल ही में, मच्छरों के लार्वों के नियंत्रण हेतु मेंढकों के प्रयोग पर भारतवर्ष में भारत सरकार एवं प्रेस के बीच एक विवाद छिड़ा हुआ है। भारतवर्ष में मेंढकों को मारने पर पहले ही प्रतिबंध लगा हुआ है। मेंढक के पैरों के निर्यात से जुड़ी हुई चिन्ता ने भी मेंढकों की हत्या पर लगे प्रतिबंध को समर्थन दिया है। इसके साथ ही एक ठोस धारणा के अनुसार जलस्थलचरों की संख्या में ह्रास मच्छरों की आबादी में वृद्धि करता है। किन्तु इसे प्रमाणित करने हेतु पर्याप्त वैज्ञानिक प्रमाणों की आवश्यकता है। मच्छरों के नियंत्रण में मेंढकों की भूमिका पर कुछ अध्ययनों की रिपोर्ट प्राप्त हुई हैं। वयस्क मच्छरों को काबू करने में प्रभावशाली कारक के रूप में वयस्क मेंढकों के महत्व पर वैज्ञानिक सूचना का अभी अभाव है। इस समीक्षा के अंतर्गत हम मच्छरों के नियंत्रण में मेंढकों के प्रयोग की व्यवहार्यता पर शुरू किए विभिन्न अध्ययनों से प्राप्त रिपोर्टों एवं उपलब्ध सूचना पर चर्चा करेंगे।

मेंढक अन्युरा वर्ग (पूंछ रहित) से संबंध रखते हैं। ये 250 लाख वर्ष पूर्व बदलती हुई पारिस्थितिकी के अनुकूल परिवर्तित पोषण-तंत्र सहित चार टाँगों वाले जलस्थलचर पूर्वजों से विकसित हुए हैं। उनके लम्बे, जालयुक्त पाँव होते हैं जो कि जमीन एवं जल दोनों में ही तैरने, कूदने एवं चढ़ने के लिए उपयुक्त होते हैं। इनका आकार 10 मि.मि. (ब्राजील के *ब्राचीसेफालस डाइडेक्टाइलस* एवं क्यूबा के *एल्युथेरोडाक्टाइलस इबेरिया*) से 300 मि.मि. (कैमरुन के गोलिआथ मेंढक, *कॉनराउआ गोलिआथ*) तक होता है। अन्युरा वर्ग में लगभग 5362 प्रजातियाँ (45 परिवार) पाई जाती हैं जिनमें से 12 परिवारों की 237 प्रजातियाँ भारत में पाई जाती हैं। अन्युरा वर्ग के सभी सदस्य मेंढक होते हैं जबकि ब्युफोनिडेई परिवार के सदस्य को 'असली (ट्रू) टोड' के नाम से जाना जाता है। टोड को मेंढकों से उनकी बनावट के आधार पर अलग किया जा सकता है जैसे मेंढक की त्वचा शुष्क वातावरण के अनुकूल चिकनी एवं गीली होती है जिसकी तुलना में टोड की त्वचा सूखी एवं मस्सेदार होती है। मेंढकों का संपूर्ण विश्व में फैलाव है और ये अंटार्कटिका व कुछ समुद्री महाद्वीपों सहित उष्णकटिबंधीय वृष्टिवनों में पाए जाने वाले व्यापक विविध रूपों को छोड़कर असमान निवास स्थानों पर पाए जाते हैं। मेंढक मुख्य रूप से त्वचा द्वारा सांस लेते हैं जो उन्हें मानव-क्रियाकलापों सहित पर्यावरणीय परिवर्तनों के लिए संवेदनशील बना देता है और इसके फलस्वरूप उनकी संख्या में तेजी से कमी एवं विलुप्त होने की भी बहुत संभावनाएं होती हैं। मेंढक की संख्या में होने वाली कमी के लिए उनके प्राकृतिक आवास स्थलों का अभाव एक महत्वपूर्ण कारण है।

*डॉ. के. राघवेन्द्र, राष्ट्रीय मलेरिया अनुसंधान संस्थान, दिल्ली में उपनिदेशक के पद पर कार्यरत हैं।

मेंढकों की आबादी में सन् 1950 से अचानक ही भारी गिरावट आई है और सन् 1980 से तो मेंढकों की 120 प्रजातियों में से अधिकतर प्रजातियों के तो विलुप्त होने की संभावना जताई जा रही है।

अन्युरान्स का जीवन-चक्र जटिल होता है। कीचड़ तालाब या झीलों जैसे जल निकायों में अण्डे देने के उपरान्त इनका बाहरी उर्वरण होता है। निषेचित अण्डे एक सप्ताह के भीतर टैडपोल्स (छुछमछली) के रूप में विकसित हो जाते हैं। छुछमछली (टैडपोल्स) पूर्ण रूप से जलीय जीवन के अनुकूल होने के साथ ही यह बिना टाँगों की होती है और पूंछ के साथ तैरने हेतु पंख एवं साँस लेने हेतु गिल्स होते हैं। पोषण और शारीरिक अवस्था पर आधारित पूर्ण कायान्तरण 2 से 11 महीने के भीतर होता है। इस दौरान छुछमछली में पहले पाँव के अंग, फिर आगे के अंग विकसित होते हैं।इसके उपरान्त गिल्स के स्थान पर फेफड़े विकसित होते हैं और अंत में पूंछ का अधःपतन शुरू हो जाता है।

मेंढक अपना संपूर्ण जीवन जलीय आवास स्थलों अथवा आर्द्र पत्तियों, चट्टानों या लट्ठों के अन्दर और आस-पास बिता देते हैं। पक्षियों, बड़ी मछलियों, साँप, ऊदबिलाव, लोमड़ी, बिच्छु और अन्य पशुओं के लिए मेंढक भोजन का महत्वपूर्ण स्रोत हैं। मेंढक अपनी पारिस्थितिकी में एक महत्वपूर्ण परभक्षी है। टैडपोल की बहुत सी प्रजातियाँ सर्वभक्षी होती हैं और मुख्यतः शैवाल, कुछ प्रोटोजोआ, कीटों के लार्वे, झींगी और जलस्थलचरों के अंडे व अपरिपक्व अवस्थाओं जैसे सूक्ष्म जीवों द्वारा पोषित होते हैं। वयस्क मेंढकों की लगभग सभी प्रजातियाँ माँसाहारी हैं तथा मच्छरों समेत एनेलिडस, गेस्ट्रोपॉड और आथ्रोपॉड जैसे अकशेरूकी (कमज़ोर) का उपभोग करते हैं। इनमें से कुछ छोटे स्तनधारियों सहित मछली, छोटे मेंढकों जैसे कशेरूकी का शिकार करते हैं। वयस्क मेंढक मुख्यतः कीटभक्षी होते हैं तथा अपनी लसलसी जीभ का उपयोग तेज चलने वाले शिकार को पकड़ने हेतु करते हैं और अपने वजन से कहीं अधिक भोजन खा सकते हैं।

अध्ययनों द्वारा दर्शाया गया है कि 50 मेंढक एक एकड़ चावल धान के खेतों को कीटों से मुक्त रख सकते हैं। इस तरह, मेंढक कीटों की आबादी पर (जिसमें मच्छर भी शामिल हैं) रोक लगा सकते हैं। मच्छर मलेरिया, फाइलेरिया जैसे मानव रोग एवं डेंगू, डेंगू हेमेरॉजिक फीवर, जापानीज़ एन्सेफालिटिस, येलो फीवर, चिकनगुनिया, जैसे रोगाणु जन्य रोगों के मुख्य रोगवाहक हैं। मच्छर विभिन्न निवास स्थलों जैसे तालाब, दलदल, खाई, नालियों, पोखरों, जल-पात्रों इत्यादि में प्रजनन करते हैं। तालाब, टेंक, कीचड़ जैसे पृथक-पृथक प्रजनन-स्थलों में लार्वों को मेंढकों द्वारा नियंत्रित किया जा सकता है तथा रोग समस्या को भी कम किया जा सकता है। कीटनाशकों के प्रयोग द्वारा परभक्षियों का चयनात्मक ढंग से निराकरण कर सकते हैं एवं निवास स्थलों पर अन्य कीटनाशी कारकों की उपस्थिति से रोगवाहकों की आबादी में वृद्धि तो हो ही सकती है, साथ ही रोगवाहक जनित रोगों की समस्या भी बढ़ सकती है।

मच्छरों की संख्या पर प्राकृतिक या जैविक रूप से नियंत्रण करने हेतु पक्षियों, स्तनधारियों, जलस्थलचरों, रेंगने वाले या कीट परभक्षियों पर आधारित रिपोर्ट अपर्याप्त है। चिउरा (ड्रेगन फ्लाई) लार्वे एवं जलीय भृंग (एक्वेटिक बीटल्स) जैसे कीटपरभक्षी मच्छरों के लार्वे द्वारा पोषित होते हैं किन्तु मच्छरों की आबादी को नियंत्रित करने में ज्यादा प्रभावी नहीं होते हैं। छुछमछली (टैडपोल) मच्छरों के लार्वों के साथ-साथ समान आवास स्थलों में ही पाए जाते हैं। मेंढक मच्छरों की आबादी में कमी लाते हैं चाहे ऐसा वयस्क मेंढक द्वारा वयस्क मच्छरों के सीधे शिकार करने से हो या छुछमछली द्वारा मच्छरों के लार्वों को नष्ट करने से हो। तथापि, कई अध्ययनों द्वारा पता चला है कि मेंढक अपने भोजन हेतु मात्र मच्छरों को ही पसन्द नहीं करते हैं। मच्छर मछली, मच्छर लार्वे, शांतिप्रिय वृक्षारोही मेंढक के प्रजनन संबंध पर शोध करते हुए गुडसेल और केट्स नामक वैज्ञानिकों की रिपोर्ट इस ओर संकेत करती है कि मच्छर लार्वों के उच्च घनत्व की मौजूदगी के बावजूद मछली के चयनात्मक एवं बढ़ते

हुए शिकार के परिणामस्वरूप झरनों में मेंढक के प्रजनन पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है।

इसके विपरीत कुछ अध्ययन दर्शाते हैं कि मच्छर-लार्वे का शिकार करने हेतु टोड/मेंढक में मुकाबला होता है। ब्लाउटीन और मारगलित नामक वैज्ञानिकों ने बताया कि *क्यूलिसेता लॉगिअरोलाता* के लार्वे *ब्यूफो विरिडिस* के टैडपोल का शिकार करते हैं। मोर्कोनी और शाइनि नामक वैज्ञानिकों द्वारा मच्छर-लार्वे और छुछमछली के संबंध में अपनी प्रयोगशाला अध्ययनों में दर्शाया गया है कि ये दोनों एक दूसरे के विकास एवं जीवन पर नकारात्मक प्रभाव डालते हैं जिसका कारण कुछ रासायनिक और सूक्ष्म-जैविक संकेतों को माना गया है। वर्ष 2006 में हेग्मन और शाइन नामक वैज्ञानिकों के अध्ययन द्वारा प्रयोगशाला में *ब्यूफो मारिनस* की उपस्थिति में मच्छर-लार्वा के जीवन दर में कमी दृष्टिगोचर होती है जबकि खेतों में अण्डनिक्षेपण में कमी भी अवलोकित की गई। मेंढकों के साथ मच्छर-लार्वे के अन्तर-विशिष्ट संबंधों पर हुए उपरोक्त अध्ययनों से पता चलता है कि मेंढकों को लार्वे के परभक्षी के रूप में प्रयोग को पूर्ण रूप से नकारा नहीं जा सकता किन्तु साथ ही मच्छर नियंत्रण हेतु इसे प्रभावशाली उपाय के रूप में समझना भी ठीक नहीं है। ऐसे स्थानों पर जहाँ मच्छर-लार्वे छुछमछली हेतु शिकार का मुख्य स्त्रोत हैं वहाँ मच्छर लार्वे टैडपोल के शिकार की बढ़ती प्राथमिकता की रिपोर्ट में भी वृद्धि हुई है। *राना टाइग्रिना* नामक छुछमछली मच्छर-प्यूपे की प्रभावी परपक्षी है। अपने अध्ययनों के दौरान स्पाइलमेन एवं सुलिवंन नामक वैज्ञानिकों ने पाया कि *हायला सेप्टेनट्रिओनालिज़* की छुछमछली विशेष रूप से *क्यूलेक्स पाइपिवन्स* लार्वे को खाती है। इस तरह से उस क्षेत्र के आवास स्थलों में इस मच्छर की आबादी में कमी लाने की ओर संकेत देती है जबकि कुमार और हवींग नामक वैज्ञानिकों का कहना है कि छुछमछली को छोटे बर्तनों में रखना अति कठिन है और मच्छर-लार्वे के घनत्व पर इसका कोई प्रभाव नहीं पड़ता।

मच्छर-लार्वे एवं अन्य कॉट्रोफिक प्रजातियों के मध्य पारस्परिक क्रियाओं एवं ऐसी पारस्परिक क्रियाओं के परिणामों पर किए गए पारिस्थितिकी अध्ययनों की रिपोर्ट काफी कम है। ब्लास्टीन और चेज़ नामक वैज्ञानिकों ने बताया कि ऐसे कॉट्रोफिक संबंधों का मच्छरों की संख्या पर अच्छा प्रभाव पड़ने की संभावना है और उनके नियंत्रण हेतु यह एक प्रभावी प्रबंधन के शस्त्र के रूप में प्रयुक्त होता है। अपनी समीक्षा में लेखकों ने भिन्न-भिन्न प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष तरीकों द्वारा मच्छरों पर कॉट्रोफिक प्रजातियों के प्रभाव पर उपयुक्त किन्तु कम उदाहरणों द्वारा चर्चा की।

जूप्लान्कटॉन्स एवं छुछमछली जैसी कॉट्रोफिक प्रजातियां रोगजनक जीवाणुओं का उपभोग करके उनकी क्षमता में कमी लाते हुए तेजी से और नकारात्मक ढंग से प्रतिद्वन्दिता द्वारा मच्छर-लार्वे को प्रभावित करती हैं। इसके साथ ही कॉट्रोफिक प्रजातियाँ वैकल्पिक शिकार बनकर अन्योन्याश्रित के रूप में भी कार्य करती हैं और मच्छरों पर परभक्षी तीव्रता से कमी लाते हैं। प्रत्यक्ष रूप से तो प्रतियोगिता तब शुरू होती है जब छुछमछली और मच्छर-लार्वे की सामान्य परभक्षी मछली होती है जो विशेष रूप से छुछमछली द्वारा पोषित होती है। चूंकि दोनों ही छुछमछली और मच्छर-लार्वे समान सीमित संसाधनों पर निर्भर होते हैं इसके परिणामस्वरूप मच्छर के घनत्व में कमी आती है। यह अप्रत्यक्ष प्रतियोगिता दोनों प्रजातियों में कमी लाती है। इस तरह, मच्छर की सामुदायिक पारिस्थितिकी के मूल सिद्धांत और संसाधनों, परभक्षियों, रोगमूलकों एवं कॉट्रोफिक प्रजातियों से उनकी पारस्परिक क्रियाएं आवश्यक हैं। मच्छरों को प्रभावित करने में एक महत्वपूर्ण घटक के रूप में कॉट्रोफिक प्रजातियों की भूमिका अभी तक अन्वेषण से अछूती है।

प्रारंभिक रिपोर्टें दर्शाती हैं कि आक्रामक प्रजातियों के प्रवेश से प्राकृतिक तंत्र के महत्वपूर्ण घटकों की कार्यात्मक शैली पर बुरा प्रभाव पड़ता है। हेग्मन और शाइन नामक वैज्ञानिकों ने शाकभक्षी अमेरिकन केन टोड पर आक्रमण के विभिन्न परिणामों की समीक्षा

करते हुए बताया कि अवधारणा के अनुसार परिणाम सकारात्मक या नकारात्मक हो सकते हैं। समान रूप से जंगलों में मेंढकों के प्रवेश के विध्वंसकारी परिणाम हो सकते हैं? अध्ययन दर्शाते हैं कि प्राकृतिक जीव-जन्तुओं के विलुप्त होने का कारण विषैले टोड का प्रवेश हो सकता है। यही कारण है कि किसी भी नियंत्रण उपाय के रूप में किसी जीव का चयन करने से पूर्व पारिस्थितिकी पर उसके प्रभाव का सावधानीपूर्वक विश्लेषण करना आवश्यक है। कुमार और हवांग नामक वैज्ञानिकों ने सुनिश्चित किया कि जैव नियंत्रण कारकों की स्थापना हेतु वातावरण में विद्यमान शिकार परभक्षी समुदाय के साथ उनकी पारस्परिक क्रियाओं की सम्यक जानकारी होना आवश्यक है। यदि परभक्षी नकारात्मक उपभोग प्रभाव दर्शाता है तो इससे अन्तःअन्तर्विशिष्ट प्रतियोगिता में कमी आती है जिससे मच्छरों की संख्या में अधिक वृद्धि होती है। तथापि मानव स्वास्थ्य को संभव लाभ पहुँचाने के लिए कुल मिलाकर मेंढकों के प्रवेश संबंधी प्रभाव एवं मच्छरों की वृद्धि दर, शारीरिक आकार, अण्डनिक्षेपण इत्यादि पर उनके प्रभाव को ध्यान में रखना चाहिए।

मेंढकों की आबादी एवं संसाधनों, परभक्षी के मध्य पारस्परिक क्रियाओं पर आधारित ज्ञान एवं अध्ययन का प्रयोग मच्छरों की संख्या में कमी लाने हेतु और इसके प्रयोग की सफलता का अनुमान करने के उद्देश्य से किया जा सकता है। उपर्युक्त अध्ययन दर्शाते हैं कि आखिरकार मेंढक अनेक प्रकार के प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष तरीकों से मच्छरों को प्रभावित करते हैं। तथापि भारत में ऐसे अध्ययन काफी कम हैं और अभी तक मेंढक और मच्छर के लार्वों के आपसी संबंधों पर भी कोई अध्ययन मौजूद नहीं है। हाल ही में कर्नाटक के कुछ जिलों में मछली के उपयोग पर किए गए अध्ययन मलेरिया नियंत्रण हेतु जैविक नियंत्रण की महत्ता को भी उजागर करते हैं। इसके साथ ही जलस्थलचरों की संख्या में कमी से रोगों की वृद्धि संबंधी विचार की विज्ञानीय प्रमाणिकता आवश्यक है। पारिस्थितिकीय अन्वेषण मच्छर नियंत्रण हेतु कौंट्रोफिक प्रजातियों के रूप में मेंढकों के प्रयोग पर प्रकाश डालते हैं। यहां यह कहा जा सकता है कि भविष्य में किए जाने वाले इस प्रकार के अध्ययनों में मच्छरों पर मेंढकों के प्रभाव एवं उनकी पारस्परिक क्रियाओं को भी समाविष्ट करना समीचीन होगा और साथ ही रोगवाहक नियंत्रण और प्रबंधन हेतु इसकी प्रभावी मध्यस्थता के लिए इन पहलुओं पर होने वाले अनुसंधान को भी आगे बढ़ाएगा❑

गर्भवती औरतों के लिए भी सुरक्षित होगी मलेरिया की नई दवा

चंडीगढ़, 14 सितम्बर : भारत की सबसे बड़ी दवा निर्माता तथा विश्व की पहली दस जैनरिक दवा निर्माण कंपनियों में सम्मिलित विख्यात कंपनी रैनबैक्सी वर्ष 2011 तक मलेरिया के इलाज के लिए एक नए कैमिकल के जरिए नई दवा के निर्माण में कार्यशील है। कंपनी के प्रबंध निदेशक व मुख्य अधिकारी श्री मालवेन्द्र मोहन सिंह ने बताया कि कंपनी के अनुसंधान व विकास विभाग में वैज्ञानिक रात-दिन इस अविष्कार को निश्चित अवधि में पूर्ण करने के लिए कार्यरत हैं। उन्होंने बताया कि मलेरिया रोग की यह दवा प्रत्येक व्यक्ति द्वारा सरलता से ली जा सकेगी तथा इसमें सबसे बड़ी विशेषता यह होगी कि यह आम आदमी के लिए तो सुरक्षित होगी ही, इसका प्रयोग गर्भवती महिलाएं भी बिना किसी चिंता के कर सकेंगी। ज्ञात रहे कि वर्तमान में मलेरिया की दवाएं गर्भवती महिलाओं के लिए सुरक्षित नहीं मानी जाती क्योंकि उनके दुष्प्रभाव गर्भ में पल रहे बच्चे को नुक्सान पहुंचा सकते हैं जिससे महिला को स्वयं भी नुक्सान होता है।

पंजाब केसरी, सोनीपत–दिनांक 15 सितम्बर 2007 से उद्धृत

मलेरिया नियंत्रण के विभिन्न आयाम और संस्थान की सोनापुर क्षेत्रीय इकाई की भूमिका

डॉ. हरदेव प्रसाद गुप्ता*

यह एक अत्यंत आश्चर्यजनक सत्य है कि मलेरिया के गंभीर एवं जानलेवा रोग होने के बावजूद जनसामान्य का इसके प्रति लापरवाहीपूर्ण दृष्टिकोण रहा है। इस रोग का नियंत्रण न केवल भारत सरकार के लिए वरन् गैर-सरकारी संस्थाओं के लिए भी एक चुनौती बना हुआ है। इस रोग की रोकथाम के लिए आरंभ से वर्तमान तक जो भी उपाय किए गए, उनमें से प्रत्येक उपाय आगे चल कर किसी न किसी कारण कारगर सिद्ध नहीं हुए। इस संबंध में मलेरिया परजीवी की अवशिष्ट कीटनाशकों के छिड़काव के प्रति एवं रसायन चिकित्सा के रूप में क्लोरोक्वीन, मैटाकेल्फिन तथा फेन्सिडार के प्रति प्रतिरोधक क्षमता विकसित होने को नकारा नहीं जा सकता। यही कारण है कि एक ऐसी नई प्रौद्योगिकी का विकास इस दिशा में आवश्यक हो गया जो कि पर्यावरण के लिए हानिकारक न हो और जनसमुदाय के लिए सरल, सस्ती, लागत-प्रभावी एवं स्वीकार्य हो। राष्ट्रीय मलेरिया अनुसंधान संस्थान ने इस चुनौती को स्वीकार किया तथा विज्ञान और प्रौद्योगिकी की एकीकृत रोगवाहक नियन्त्रण (आई.डी.वी.सी.) परियोजना के अन्तर्गत मलेरिया नियंत्रण की जैव-पर्यावरणीय विधि के प्रयोग एवं प्रदर्शन से मलेरिया नियंत्रण की नई तकनीक के विकास का बीड़ा उठाया जिसमें मलेरिया नियंत्रण का कार्य बिना कीटनाशकों के प्रयोग से जैसे वातावरण प्रबन्धन, जैव कारकों का प्रयोग, सामुदायिक सहयोग, स्वास्थ्य-शिक्षा, इत्यादि विधियों का प्रयोग किया जाता है। सबसे पहले इस वैकल्पिक-प्रौद्योगिकी का प्रारंभ वर्ष 1983 में गुजरात के खेड़ा जिले के नाडियाड तालुका में किया गया जिसका परिणाम काफी उत्साहवर्धक रहा जिससे प्रभावित होकर संस्थान ने इस प्रौद्योगिकी का व्यापक-स्तर पर देश के ग्रामीण, शहरी एवं औद्योगिक इलाकों और समुद्र तटीय क्षेत्रों में प्रदर्शन कर मलेरिया नियंत्रण की इस वैकल्पिक तकनीक को स्थाई रुप देने का प्रयास किया। इसी योजना के अन्तर्गत देश के पूर्वोत्तर क्षेत्र में वर्ष 1986 के मई माह में आसाम के कामरूप जिले के सोनापुर क्षेत्र में एकीकृत रोगवाहक नियन्त्रण परियोजना की एक क्षेत्रीय इकाई खोली गई।

यदि यह कहा जाए कि भारतवर्ष का कोई क्षेत्र ऐसा नहीं जो मलेरिया से अछूता रहा हो तो इसमें कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी और वहीं दूसरी ओर देश के पूर्वोत्तर क्षेत्र सोनापुर (आसाम) को मलेरियाजनित क्षेत्र कहा जाए तो भी कोई आश्चर्य नहीं होगा क्योंकि इस क्षेत्र में जहां प्रतिवर्ष लाखों लोग मलेरिया रोग का शिकार होते हैं वहीं सैंकड़ों लोग काल का ग्रास हो जाते हैं। यही नहीं, इस क्षेत्र में *प्लाज्मोडियम फाल्सीपैरम* मलेरिया का प्रकोप सबसे ज्यादा (80 प्रतिशत) है

*डॉ. हरदेव प्रसाद गुप्ता, राष्ट्रीय मलेरिया अनुसंधान संस्थान की एकीकृत रोगवाहक नियंत्रण परियोजना (क्षेत्रीय इकाई) सोनापुर (आसाम) में सहायक निदेशक के पद पर कार्यरत हैं।

क्योंकि वस्तुतः यह क्षेत्र जनजातीय बहुल क्षेत्र है। यहां के मुख्य व्यवसाय धान की खेती, हथकरघा उद्योग, जंगली वस्तुओं को इकट्ठा कर बेचना, मजदूरी इत्यादि हैं जिसमें संचार एवं आवागमन की सुविधा नाम मात्र की है। इसके साथ ही यहां यह बताना भी प्रासंगिक होगा कि इस क्षेत्र में मुख्य रूप से तीन मलेरिया रोग-वाहक मच्छर जैसे *एनॉफिलीज़ मिनिमस, एनॉ. डायरस* एवं *एनॉ. फ्लुविएटिलिस* पाए जाते हैं।

यही नहीं, इस क्षेत्र की भौगोलिक स्थिति भी ऐसी है जहाँ वर्ष में 7-8 महीने वर्षा होती है और वर्षा के कारण इस क्षेत्र में पहाड़ी नदियों, झरनों का जाल सा बिछा हुआ है। परिणामस्वरूप असंख्य मच्छर प्रजनन-स्थल यहां वर्ष भर देखे जा सकते हैं। क्षेत्र की इस स्थिति को ध्यान में रखते हुए यह निर्णय लिया गया कि यहाँ पर जैव-पर्यावरणीय विधि के सभी कारक कारगर नहीं होंगे। ऐसी स्थिति में मलेरिया से निजात पाने के लिए व्यक्तिगत सुरक्षा के लिए मच्छरदानियों का प्रयोग अति उत्तम समझा गया और अन्य विधियों के साथ-साथ साधारण एवं कीटनाशकों से संसिक्त मच्छरदानियों के प्रयोग एवं परीक्षण पर विशेष जोर देकर मलेरिया नियंत्रण का कार्य शुरू किया गया।

मलेरिया नियंत्रण के प्रमुख उपाय

मलेरिया एक ऐसा रोग है जिसका नियंत्रण तो किया जा सकता है किन्तु इस रोग का शिकार हो जाने पर इसके इलाज में यदि लापरवाही बरती जाए तो यह जानलेवा साबित हो सकता है। यही कारण है कि वैज्ञानिकों एवं चिकित्सकों द्वारा इस रोग से बचाव की सलाह दी जाती है। भौगोलिक दृष्टि से यह देखा गया है कि आसाम का भूगोल, जलवायु एवं क्षेत्रीय परिस्थितियाँ मलेरिया के अनुकूल हैं। इसी को ध्यान में रखते हुए यहां मलेरिया नियंत्रण उपायों के रुप में साधारण एवं कीटनाशक संसिक्त मच्छरदानियों के प्रयोग पर जोर दिया गया और संबंधित क्षेत्र के मच्छरों का बदलते वातावरण के परिप्रेक्ष्य में अध्ययन करने के साथ ही नई विकसित मलेरियारोधी औषधियों, जैसे आर्टिस्युनेट, आर्टिमिसिनिन, एजिथ्रोमाइसिन, आर्टिथर, एटकिन का क्षेत्रीय परीक्षण एवं मूल्यांकन किया गया तथा हिमालयन हर्ब सोलेनम इण्डिका का मलेरियारोधी के रूप में मूल्यांकन किया गया। इसके अतिरिक्त मलेरिया टीके के परीक्षण हेतु मूल्यांकन कार्य करने के साथ ही संबंधित परीक्षणों की अनेक अनुसंधान परियोजनाओं पर भी अध्ययन कार्य पूर्ण हो चुका है।

यहाँ यह बताना भी अनिवार्य है कि सोनापुर क्षेत्रीय इकाई द्वारा अपनाए गए उपाय न केवल संबंधित क्षेत्र के लिए वरन् सामान्य रूप से अपनाए जाने वाले नियंत्रण उपायों के रूप में भी अपनाए जा सकते हैं जो कि इस प्रकार हैं:

कीटनाशकों से संसिक्त मच्छरदानियों को मलेरिया नियंत्रण हेतु सबसे कारगर तकनीक के रूप में स्थापित करते हुए इसको पूर्वोत्तर के सभी राज्यों को हस्तान्तरित किया गया। देश-व्यापी मलेरिया नियंत्रण कार्यक्रम के इस बदलते परिदृश्य में इस बीमारी से बचने के लिए व्यक्तिगत सुरक्षा विधि के अन्तर्गत कीटनाशकों से संसिक्त मच्छरदानियों का कई वर्षों तक वृहद स्तर पर परीक्षण कर मलेरिया नियंत्रण की, विशेष रूप से इस क्षेत्र के लिए इस तकनीक का विकास कर यह सिद्ध कर दिया कि इसके प्रयोग से पूरी तरह मलेरिया से निजात पाई जा सकती है। अब आवश्यकता है कि सरकार इस तकनीक का प्रचार एवं प्रसार पूरे पूर्वोत्तर राज्यों में करे ताकि लोग पूरी तरह जागरुक हो जाएं। निश्चित रूप से निकट भविष्य में यह तकनीक पूरे देश में मलेरिया नियंत्रण हेतु वरदान साबित होगी।

इसके अंतर्गत स्वास्थ्य शिक्षण हेतु विभिन्न प्रकार की शिक्षण-प्रशिक्षण सामग्रियों एवं तौर-तरीकों का विकास करके इसके प्रयोग से मलेरिया को काफी हद तक नियन्त्रित किया गया। इस प्रयोग की चर्चा अन्य जगहों पर कर उन्हें इससे लाभ उठाने की सलाह दी गई। मलेरिया नियंत्रण हेतु लोगों में जागरुकता पैदा करने

के लिए इस क्षेत्रीय इकाई द्वारा कई प्रकार की शिक्षण-प्रशिक्षण क्रार्यक्रमों तथा सामग्री का विकास कर ग्रामीण अंचलों में इसका व्यापक प्रदर्शन किया गया और लोगों को इस बीमारी के प्रति पूरी तरह जागरुक कर सतर्क रहने की प्रेरणा दी गई जिससे लाखों लोग इस बीमारी से छुटकारा पा सकें। इन विकसित सामग्रियों में जैव-पर्यावरणीय विधि द्वारा मलेरिया नियंत्रण संबंधी कई प्रकार के वीडियो कैसेट तैयार किए गए जिनको हिन्दी, अंग्रेजी एवं असमी भाषा में समय-समय पर टेलिविजन पर प्रसारित कर लोगों को जागरुक किया जाता रहा है। ग्राम-पंचायत एवं ब्लाक स्तर पर भी इनका प्रदर्शन किया जाता रहा है। कई प्रकार के फोल्डर्स, बुकलेट्स एवं मलेरिया रोग को दर्शाने वाले पोस्टर्स विकसित व प्रकाशित कर क्षेत्र के लोगों तक पहुंचाए गए। परिणामस्वरुप आज मलेरिया नियंत्रण हेतु इस क्षेत्र के हर घर में जागरुकता का आलम यह है कि लोग इस कार्य में सहयोग देने हेतु स्वत: आगे आते हैं।

मलेरिया वाहक मच्छरों जैसे *एनॉ. मिनिमस, एनॉ. फ्लुविएटिलिस, एनॉ. डायरस* इत्यादि की जीवनचर्या का गहन अध्ययन कर यह पता लगाया गया कि वे किस तरह मलेरिया फैलाने में अपना सहयोग देते हैं तथा इन्हें कैसे नियंत्रित किया जा सकता है। इसकी जानकारी सभी पूर्वोत्तर राज्यों को देने के साथ-साथ उन्हें सलाह दी गई कि कीटनाशकों का छिड़काव तथा अन्य नियन्त्रण कार्य इन वाहक मच्छरों की जीवनचर्या को ध्यान में रखकर ही करें जिससे मलेरिया नियंत्रण का लक्ष्य प्राप्त हो सके।

संस्थान की क्षेत्रीय इकाई अपने-आप में एक प्रशिक्षण केन्द्र के रूप में विकसित हो चुकी है, जहां से हजारों की संख्या में चिकित्सक, पैरामेडिकल स्टाफ, ग्रामीण इलाकों से आए स्वयं-सेवक तथा स्कूली छात्रों ने प्रशिक्षण प्राप्त किया और वे लोग विभिन्न राज्यों में जाकर मलेरिया नियंत्रण कार्यक्रम में अपना सहयोग प्रदान कर रहे हैं।

नई विकसित मलेरिया औषधियों का क्षेत्रीय मूल्यांकन कर उन्हें जटिल *प्लाज्मोडियम फाल्सीपैरम* मलेरिया के उपचार हेतु प्रयोग में लाने के लिए अनुमोदित किया गया। ये औषधियाँ आर्टिसुनेट, आर्टिमीथर, आर्टिमिसिनिन, एस.पी. एवं आर्टिसुनेट से मिल कर बनी दवाएं हैं जिसे एस.पी.-ए.सी.टी. कहते हैं, इनके प्रयोग की स्वीकृति भी स्वास्थ्य विभाग द्वारा दी जा चुकी है।

मलेरिया के विरुद्ध तैयार टीके के क्षेत्रीय परीक्षण हेतु पर्याप्त मात्रा में आवश्यक सुविधाओं को उपलब्ध कराने में भी यह क्षेत्रीय इकाई पूर्ण रूप से सक्षम है।

प्लाज्मोडियम फाल्सीपैरम मलेरिया के शीघ्र रोग निदान एवं उपचार के लिए विकसित अनेकों किट्स का परीक्षण एवं मूल्यांकन कर इनमें से कुछ की उपयोगिता पूर्ण-रूपेण सिद्ध कर इनके व्यावहारिक प्रयोग का अनुमोदन किया गया। जिसे स्वास्थ्य विभाग द्वारा स्वीकार कर उसके व्यावहारिक प्रयोग की अनुमति प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों को उनके स्तर पर दे दी गई है।

प्लाज्मोडियम फाल्सीपैरम परजीवी में मलेरियारोधी औषधियों के प्रति बढ़ते प्रतिरोध को देखते हुए संस्थान ने कई औषधियों के प्रति इनकी सुग्राह्यता का अध्ययन किया जिससे इस क्षेत्र की औषध नीति को परिवर्तित करने में काफी सहायता मिली है। जिसका परिणाम है कि आज इस क्षेत्र में क्षेत्र वार अलग-अलग औषधियों से *प्लाज्मोडियम फाल्सीपैरम* मलेरिया का उपचार हो रहा है।

उल्लेखित उपायों के प्रयोग से जहाँ संस्थान की सोनापुर क्षेत्रीय इकाई द्वारा मलेरिया नियंत्रण काफी हद तक कारगर सिद्ध हुआ है वहीं क्षेत्र विशेष द्वारा अपनी क्षेत्रीय परिस्थितियों, भूगोल, जलवायु, रोगवाहक मच्छर आदि का अध्ययन एवं विश्लेषण कर इन उपायों को अपना कर जन-जागरण द्वारा इस गंभीर एवं जानलेवा रोग से निरंतर छुटकारा पाया जा सकता है❑

प्रासंगिकी

संस्थान की गतिविधियाँ

रायपुर (छत्तीसगढ़)

डॉ. आर.एम. भट्ट ने दिनांक 30–31 जुलाई 2007 को राज्य में विभिन्न स्वास्थ्य कार्यक्रमों के कार्यान्वयन और निष्पादन कार्य की समीक्षा करने के उद्देश्य से संयुक्त सचिव (स्वास्थ्य), भारत सरकार, दिल्ली के दौरे के मद्देनजर सचिव (स्वास्थ्य), छत्तीसगढ़ सरकार द्वारा आयोजित राज्य स्तरीय कार्यक्रम के अंतर्गत प्रबंधकों एवं जिला मलेरिया अधिकारियों की बैठक में हिस्सा लिया। संबंधित बैठक के दौरान विभिन्न मुद्दों मुख्यत: निगरानी व्यवस्था को कड़ा करने, मलेरिया निगरानी में आशा–गैर-सरकारी संस्था के कार्यकर्त्ताओं की भूमिका, आर.डी.के. के प्रयोग, आई.आर.एस. के विस्तार और कीटनाशक संसिक्त मच्छरदानियों को बढ़ाने आदि के बारे में चर्चा की गई। संयुक्त सचिव ने दिनांक 31 जुलाई 2007 को क्षेत्रीय इकाई का दौरा भी किया। उन्हें कई प्रयोगशालाएं दिखाई गई और रायपुर क्षेत्रीय इकाई द्वारा शुरू की गई गतिविधियों के बारे में संक्षिप्त रूप से जानकारी दी गई।

डॉ. जी.डी.पी. दत्ता ने दिनांक 6–14 अगस्त 2007 तक जिला कांकेर में अंतागढ़ सी.एच.सी. का दौरा किया और वहाँ के रोगियों से लिए गए *पी. फाल्सीपैरम* और *पी. वायवैक्स* पॉजिटिव रक्त नमूनों की संदर्भ स्लाइड बनाई और फिल्टर पेपर नमूने लिए गए।

डॉ. एस.एन. शर्मा ने दिनांक 17 अक्टूबर 2007 को मुख्य चिकित्सा अधिकारी, रायपुर की अध्यक्षता में जिला स्तरीय टी.ए.सी. बैठक में भाग लिया जिसका उद्देश्य दिनांक 15 से 17 नवम्बर 2007 को होने वाले लसीका संबंधी फाईलेरियासीस (ई.एल.एफ.) के उन्मूलन हेतु डी.आई.सी. के व्यापक स्तर पर हुए औषध प्रशासन से संबंधित था।

डॉ आर.एम. भट्ट ने दिनांक 26 अक्टूबर 2007 को राज्य के नौ फाइलेरिया महामारी से ग्रसित जिलों में ई.एल.एफ. हेतु एम.डी.ए. की योजना पर चर्चा करने के उद्देश्य से निदेशक, स्वास्थ्य सेवाएं द्वारा आयोजित राज्य स्तरीय टी.ए.सी. बैठक में हिस्सा लिया तथा 29 अक्टूबर 2007 को राज्य में दिनांक 15 नवम्बर 2007 को ई.एल.एफ. हेतु विभिन्न गतिविधियों की योजना पर निदेशालय, स्वास्थ्य सेवाएं द्वारा आयोजित प्रशिक्षण कार्यक्रम में भाग लिया।

बंगलौर (कर्नाटक)

डॉ. एस.के. बोष ने दिनांक 6 से 11 अगस्त को ग्लासगो में आई.सी.ओ.पी.ए.एक्स.आई. में हिस्सा लिया और मौखिक सत्र में अपना प्रस्तुतिकरण दिया एवं 'जैव-विविधता की विवक्षा पर अध्ययन की जरूरत और भारत में एक दशक से मलेरिया नियंत्रण हेतु डिंभकनाशी मछली के अनुभव' पर व्याख्यान भी प्रस्तुत किया।

हरिद्वार (उत्तराखंड)

डॉ. मेहता, संयुक्त सचिव, स्वास्थ्य सेवा निदेशालय ने उत्तराखंड में दिनांक 21 अगस्त 2007 को डॉ. खान और अधिकारियों के साथ इकाई का दौरा किया।

डॉ. वी.के. दुआ ने दिनांक 29 अगस्त 2007 को निदेशालय स्वास्थ्य, देहरादून में रोगवाहक जन्य रोगों पर आयोजित प्रशिक्षण कार्यक्रम में 'मच्छर एवं इसके नियंत्रण' विषय पर व्याख्यान प्रस्तुत किया तथा जैव-पारिस्थितिकीय पद्धतियों द्वारा मलेरिया रोकथाम विषय पर प्रदर्शनी का आयोजन किया गया जिसमें डॉ. ए.सी. पाण्डेय, श्री एस.पी. सेठी और श्री एच.सी. पाण्डेय ने भाग लिया।

डॉ. वी.के. दुआ और श्री एस.पी. सेठी ने दिनांक 10 से 13 सितम्बर 2007 को आई.ओ.सी., मथुरा का दौरा

किया जिसका उद्देश्य बेक्टिसाइड के विभिन्न संरचनाओं के क्षेत्रीय मूल्यांकन पर परियोजना का कार्यान्वयन करना था।

श्री स्वप्नील राय और श्री एच.सी. पाण्डेय ने दिनांक 9 से 15 सितम्बर 2007 तक विभिन्न पर्यावरणीय नमूनों को एकत्रित करने के उदेश्य से हिमाचल प्रदेश के विभिन्न स्थानों का दौरा किया।

डॉ. टी. शर्मा, डॉ. ए.सी. पाण्डेय, श्री दयाल चंद्र और श्री राजेश सिंह ने दिनांक 10-18 सितम्बर 2007 को अज़ा नीम पर क्षेत्रीय कार्य करने हेतु आयुध फैक्ट्री, कानपुर का दौरा किया।

डॉ. बी.के. दुआ ने दिनांक 15 अक्टूबर 2007 को स्वास्थ्य निदेशालय, देहरादून में रोगवाहक जन्य रोगों पर आयोजित प्रशिक्षण कार्यक्रम में 'मच्छर एवं इनके नियंत्रण' विषय पर व्याख्यान प्रस्तुत किया तथा जैव-पर्यावरणीय पद्धतियों के प्रयोग द्वारा मलेरिया एवं इसके नियंत्रण विषय पर एक प्रदर्शनी का आयोजन किया गया। उल्लेखित प्रदर्शनी में डॉ. ए.सी. पाण्डेय, श्री एच.सी. पाण्डेय और श्री पी.पी. पन्त ने भाग लिया।

डॉ. आशीष गुप्ता, श्री एस.पी. सेठी, श्री अरविन्द कुमार तथा श्री मनीराम ने दिनांक 9 से 17 अक्टूबर 2007 तक मलेरिया और मच्छरों के नियंत्रण हेतु मध्यस्थ गतिविधियों की निगरानी करने के उद्देश्य से अनुवर्ती सर्वेक्षण करने के लिए एन.टी.पी.सी., रिहंदनगर, जिला सोनिवाधरा, उत्तरप्रदेश का दौरा किया।

श्री गौरव वर्मा, जुनियर प्रोजैक्ट फेलौ ने वनस्पतिज्ञ गुरूकुल विश्वविद्यालय, हरिद्वार के साथ दिनांक 13 से 17 अक्टूबर 2007 तक मलेरियारोधी गतिविधियों को प्रदर्शित करने हेतु विभिन्न पौधों को एकत्रित करने के उद्देश्य से गढ़वाल क्षेत्र के विभिन्न स्थानों का दौरा किया तथा 25 अक्टूबर 2007 को पौधों की पहचान करने हेतु बी.एस.आई., देहरादून का दौरा किया।

डॉ. टी. शर्मा एवं श्री एच.सी. पाण्डेय ने दिनांक 15 से 18 अक्टूबर 2007 को लालगंज, जिला रायबरेली, उ.प्र. में आयोजित स्वास्थ्य शिविर में भाग लिया और मलेरिया के जैव-पर्यावरणीय नियंत्रण से संबंधित विभिन्न गतिविधियों को दर्शाया। शिविर का उद्घाटन श्रीमती सोनिया गाँधी द्वारा किया गया जिसमें राज्य विभाग के स्वास्थ्य अधिकारियों व जनसामान्य ने एन.आई.एम. आर. के शिविर में सक्रियतापूर्वक भाग लिया।

डॉ. जी.वी. रामाना, प्रधान लोक स्वास्थ्य विशेषज्ञ, वर्ल्ड बैंक, डॉ. रोबर्ट मार्टिन, कार्यकारी निदेशक, सी.डी.सी. अटलान्टा, डॉ. राना एवं स्वास्थ्य निदेशालय के कई अधिकारियों ने दिनांक 15 नवम्बर 2007 को संस्थान की क्षेत्रीय इकाई का दौरा किया।

श्री गौरव वर्मा (जुनियर प्रोजेक्ट फेलो) सहायक ने दिनांक 15 से 17 नवम्बर 2007 को नैनीताल में यू. कोस्ट देहरादून द्वारा आयोजित द्वितीय विज्ञानीय सम्मेलन में भाग लिया एवं पोस्टर सत्र में पेपर प्रस्तुत किया।

श्री एस.पी. सेठी, श्री एच.सी. पाण्डेय एवं टीम ने दिनांक 23 नवम्बर 2007 को देहरादून, स्वास्थ्य निदेशालय में रोगवाहक जन्य रोगों पर हो रहे प्रशिक्षण कार्यक्रम में 'मच्छर एवं इनके नियंत्रण' विषय पर एक प्रदर्शनी का आयोजन किया गया।

श्री एस.पी. सेठी और डॉ. पी.पी. पंत ने दिनांक 30 अक्टूबर 2007 से 3 नवम्बर 2007 तक क्षेत्रीय कार्य हेतु आई.ओ.सी., मथुरा का दौरा किया।

क्षेत्रीय इकाइयों में भी हिन्दी दिवस

जबलपुर (मध्यप्रदेश)

संस्थान की क्षेत्रीय इकाई, जबलपुर द्वारा क्षेत्रीय जनजातीय आयुर्विज्ञान अनुसंधान केन्द्र, जबलपुर के साथ संयुक्त

जबलपुर क्षेत्रीय इकाई में हिन्दी दिवस पर पुरस्कार वितरण समारोह

रूप से हिन्दी दिवस मनाया। इस उपलक्ष्य में अनेक प्रकार की हिन्दी प्रतियोगिताओं का आयोजन किया गया जैसे टिप्पण-प्रारूपण प्रतियोगिता, निबंध प्रतियोगिता, वाद-विवाद प्रतियोगिता एवं हिन्दी टंकण प्रतियोगिता। निबंध प्रतियोगिता का विषय था– 'वर्तमान संदर्भ में न्यायपालिका बनाम कार्यपालिका' एवं वाद-विवाद प्रतियोगिता में विषय था– 'परमाणु करार'। इन प्रतियोगिताओं का एकमात्र उद्देश्य कर्मचारियों एवं अधिकारियों को अपना सरकारी कामकाज राजभाषा हिन्दी में करने हेतु प्रेरित करना था। उल्लेखित प्रतियोगिताओं में अनेक कर्मचारियों ने पूर्ण उत्साह के साथ भाग लिया।

दिनांक 26 सितम्बर 2007 को पुरस्कार वितरण समारोह आयोजित किया गया जिसमें दोनों संस्थानों के अधिकारियों एवं कर्मचारियों की उपस्थिति में केन्द्र की प्रभारी अधिकारी डॉ. नीरू सिंह द्वारा हिंदी प्रतियोगिताओं एवं हिन्दी प्रोत्साहन योजना के विजेताओं को नकद पुरस्कार एवं प्रमाण-पत्र वितरित किए गए।

सर्वप्रथम टिप्पण-प्रारूपण प्रतियोगिता में प्रथम एवं द्वितीय पुरस्कार तो क्षेत्रीय जनजातीय आयुर्विज्ञान अनुसंधान केन्द्र के कर्मचारियों को प्राप्त हुआ। किन्तु तृतीय एवं सांत्वना पुरस्कार संस्थान की क्षेत्रीय इकाई के श्री एस. के. उपाध्याय व श्री विजय अरोड़ा को प्रदान किए गए। इसके उपरान्त हिन्दी टंकण प्रतियोगिता में श्री डी.एन. विश्वकर्मा, अवर श्रेणी लिपिक को प्रथम पुरस्कार प्रदान किया गया एवं द्वितीय, तृतीय व सांत्वना पुरस्कार क्षेत्रीय जनजातीय आयुर्विज्ञान केन्द्र के कर्मचारियों ने प्राप्त किए।

तत्पश्चात् हिन्दी निबंध प्रतियोगिता में श्री विश्वनाथ सिंह यादव, एफ.एल.ए. को प्रथम एवं श्री पुष्पेन्द्र तिवारी, डी.ई.ओ. को तृतीय पुरस्कार प्रदान किए गए जबकि द्वितीय पुरस्कार क्षेत्रीय जनजातीय आयुर्विज्ञान अनुसंधान केन्द्र के कर्मचारी ने प्राप्त किया। इसके साथ ही श्री सुरेन्द्र कुमार उपाध्याय एवं श्री प्रवीन कुमार कुंडे को सांत्वना पुरस्कार प्रदान किए गए।

वाद-विवाद प्रतियोगिता में श्री सुरेन्द्र कुमार उपाध्याय, एफ.एल.ए. को प्रथम पुरस्कार प्रदान किया गया तथा द्वितीय, तृतीय व सांत्वना पुरस्कार क्षेत्रीय जनजातीय आयुर्विज्ञान अनुसंधान केन्द्र के कर्मचारियों ने प्राप्त किए। इस समारोह का समापन करते हुए डॉ. नीरू सिंह ने प्रतियोगिताओं के विजेताओं को बधाई देते हुए कहा कि हम सभी राजभाषा हिन्दी के प्रति सम्मान और गौरव का भाव रखते हुए हिन्दी में अपना अधिक से अधिक कार्य करें। इसके साथ ही उन्होंने आशा जताई कि अगले वर्ष और अधिक संख्या में प्रतियोगी इन प्रतियोगिताओं में हिस्सा लेंगे।

सोनापुर (आसाम)

संस्थान की क्षेत्रीय इकाई सोनापुर में भी हिन्दी दिवस हर्षोल्लास के साथ मनाया गया तथा इस उपलक्ष्य में अनेक प्रकार की रोचक गतिविधियों एवं प्रतियोगिताओं का आयोजन किया गया जिसमें इकाई के सभी कर्मचारियों एवं अधिकारियों ने उत्साहपूर्वक भाग लिया। इस अवसर पर सोनापुर महाविद्यालय के हिन्दी विभाग की विभागाध्यक्ष श्रीमती चन्दना शर्मा एवं श्रीमती कसलिमा जहान, प्रवक्ता, हिन्दी तथा केन्द्रीय विद्यालय, मालीगाँव के उपाचार्य डॉ. टी.पी. शुक्ला एवं केन्द्रीय विद्यालय, सी. आर.पी.एफ., गुवाहाटी के डॉ. ओ.पी. राय को निर्णायक मण्डल के सदस्यों के रूप में आमंत्रित किया गया था। कार्यक्रम की अध्यक्षता इकाई के प्रभारी अधिकारी डॉ. वास देव, उपनिदेशक द्वारा की गई।

कार्यक्रम का शुभारम्भ अतिथियों द्वारा दीप प्रज्जवलन कर तथा सभी अतिथियों के स्वागत के साथ किया गया। डॉ. हरदेव प्रसाद गुप्ता, सहायक अनुसंधान अधिकारी ने कार्यक्रम का संयोजन एवं संचालन सफलतापूर्वक किया।

कार्यक्रम का प्रारंभ प्रात: 10 बजे निबंध लेखन प्रतियोगिता से हुआ जिसका विषय था– "राष्ट्रभाषा हिन्दी ही क्यों?"। इस प्रतियोगिता में पर्यवेक्षण का कार्य श्री खगेश्वर प्रधान ने किया एवं प्रथम, द्वितीय व तृतीय

हिन्दी कार्यशाला में संबोधित करते हुए क्षेत्रीय इकाई के प्रभारी अधिकारी डॉ. वास देव

पुरस्कार क्रमश: श्रीमती अर्चना गुप्ता, श्री सुनील कुमार त्यागी एवं श्री जी.जी. तिवारी को प्रदान किए गए।

निबंध प्रतियोगिता के उपरान्त सभी कर्मचारियों एवं अतिथियों ने जलपान का आनन्द उठाया। तत्पश्चात् भाषण प्रतियोगिता का शुभारंभ हुआ जिसका संचालन सहायक अनुसंधान अधिकारी डॉ. हरदेव प्रसाद गुप्ता ने किया। प्रतियोगिता प्रारंभ होने से पूर्व संचालक महोदय ने कहा कि दैनिक जीवन में हम यदि इस भाषा के प्रयोग की आदत क्षेत्रीय भाषा के साथ डाल लें तो देश के किसी भी कोने में जाने पर हमें किसी प्रकार की भाषाई समस्या से उत्पन्न परेशानी नहीं उठानी पड़ेगी।

संबंधित प्रतियोगिता में संस्थान के अधिकारियों

सोनापुर क्षेत्रीय इकाई में हिन्दी दिवस संबंधी गतिविधियों के चित्र

व कर्मचारियों ने पूरे जोश से भाग लेकर अपने विचार अभिव्यक्त किए। इस प्रतियोगिता में प्रथम पुरस्कार डॉ. हरदेव प्रसाद गुप्ता, द्वितीय पुरस्कार श्री खगेश्वर प्रधान एवं तृतीय पुरस्कार श्री शोभन फुकन को प्रदान किए गए।

उपर्युक्त परिणाम घोषित होने के पश्चात् कार्यक्रम में उपस्थित सभी अतिथिगणों ने अपने-अपने विचार व्यक्त किए। कार्यक्रम का समापन डॉ. वासदेव द्वारा धन्यवाद ज्ञापन से किया गया जिसमें उन्होंने सभी प्रतियोगियों एवं सहयोगियों द्वारा कार्यक्रम को सफल बनाने हेतु सक्रिय भागीदारी के लिए धन्यवाद दिया। इसके साथ ही उन्होंने गाँव-गाँव तथा स्कूलों में मलेरिया नियंत्रण से संबंधित विषय पर हिन्दी भाषा में प्रतियोगिताएं आयोजित कराकर राजभाषा हिन्दी का प्रचार-प्रसार करने का भी निर्णय लिया।

बंगलौर (कर्नाटक)

संस्थान की क्षेत्रीय इकाई, बंगलौर में भी हिन्दी दिवस पूरे उत्साह के साथ दिनांक 21 सितम्बर 2007 को मनाया गया। इस अवसर पर आयोजित कार्यक्रम में डॉ. वी.के. चल्लु, राजभाषा अध्यक्ष, राष्ट्रीय क्षय रोग संस्थान, बंगलौर को मुख्य अतिथि के रूप में आमंत्रित किया गया। संबंधित कार्यक्रम के अंतर्गत दो प्रतियोगिताओं का आयोजन किया गया–निबंध प्रतियोगिता एवं वाद-विवाद प्रतियोगिता। इन प्रतियोगिताओं में क्षेत्रीय इकाई के समस्त कर्मचारियों ने पूरे उत्साह के साथ भाग लेकर अपने विचारों को निबंध प्रतियोगिता में लिखकर एवं वाद-विवाद प्रतियोगिता में बोलकर अभिव्यक्त किया।

सर्वप्रथम निबंध प्रतियोगिता का आयोजन किया गया जिसका विषय था –'राष्ट्र की प्रगति में महिलाओं का योगदान'। संबंधित प्रतियोगिता की प्रतियों की जाँच एवं संचालन डॉ. वी.के. चल्लु द्वारा किया गया। इस प्रतियोगिता में प्रथम, द्वितीय, तृतीय पुरस्कार क्रमशः श्री प्रदीप दत्ता, श्री राजेन्द्र प्रसाद तिवारी व श्री महेश कुमार जायसवाल को प्रदान किए गए।

निबंध प्रतियोगिता के समाप्त होने के पश्चात् वाद-विवाद प्रतियोगिता का आयोजन किया गया। इस प्रतियोगिता का विषय था – 'प्रदूषण और रोकथाम'। उक्त प्रतियोगिता में सभी कर्मचारियों ने सामूहिक रूप से भाग लिया एवं एक दूसरे के विचार भी पूर्ण रूप से एकाग्रचित होकर सुने। वाद-विवाद प्रतियोगिता में निर्णायक की भूमिका डॉ. वी.के. चल्लु, डॉ. एस.के. घोष व डॉ. वी.पी. ओझा ने निभाई, जिसमें प्रथम पुरस्कार श्री महेश कुमार जायसवाल, द्वितीय पुरस्कार श्री राजेन्द्र प्रसाद तिवारी एवं तृतीय पुरस्कार श्री आई.ए. सिद्दकी को प्रदान किए गए।

कार्यक्रम का समापन क्षेत्रीय इकाई के प्रभारी अधिकारी डॉ. एस.के. घोष द्वारा धन्यवाद ज्ञापन से किया गया जिसमें उन्होंने सभी प्रतियोगियों एवं सहयोगियों द्वारा कार्यक्रम को सफल बनाने हेतु सक्रिय भागीदारी के लिए धन्यवाद दिया।

मलेरिया संबंधी देश-विदेश के समाचार

वैज्ञानिकों ने खोजा डेंगू का जीन

सिंगापुर। वैज्ञानिकों ने मच्छरों के काटने से फैलने वाली बीमारी डेंगू से संबंधित एक नए जीन्स की खोज की है। वैज्ञानिकों के अनुसार जीन्स के आधार पर इस लाइलाज बीमारी की दवाई विकसित की जा सकेगी। 'नोवार्टिस इंस्टीट्यूट फॉर ट्रॉपिकल डिजीजिस' और 'जीनोम इंस्टीट्यूट' के वैज्ञानिक सुभाष वासुदेवन और मार्टिन हिबर्ट के नेतृत्व में एक अनुसंधान दल ने 'माइक्रो-ऐरे' तकनीक के आधार पर इंसानी शरीर में इन जीन्स पर नजर रखी। दल ने इस बात की पड़ताल की है कि यह जीन्स डेंगू के वायरस से सामना होने पर क्या प्रतिक्रिया देता है और इसी आधार पर इनकी पहचान संभव हुई।

हरी भूमि, नई दिल्ली
दिनांक 8 नवम्बर 2007 से उद्धृत

अब होगा डेंगू का देसी इलाज गिलोय द्वारा

नई दिल्ली। बरसात के इस मौसम में डेंगू का प्रकोप बढ़ता ही जा रहा है। वर्तमान दौर में आम तौर पर इस बीमारी की रोकथाम के लिए लोग मुख्यत: अंग्रेजी दवाइयों का ही उपयोग करते हैं। लेकिन इस बीमारी का उपचार भारतीय चिकित्सा पद्धति में भी है। तिब्बिया मेडिकल कॉलेज के पूर्व प्रधानाचार्य व आयुर्वेद कालिंग के निदेशक डॉ. बी.के. सिन्हा के अनुसार आयुर्वेद चिकित्सा पद्धति के माध्यम से भी डेंगू पीड़ित मरीज के प्लेटलेट्स संतुलित किए जा सकते हैं। डॉ. सिन्हा के अनुसार इस मौसम में हमारी शरीर की प्रतिरोधक क्षमता कम हो जाती है, ऐसे में हम किसी भी बीमारी की चपेट में आसानी से आ जाते हैं। उन्होंने बताया कि डेंगू पीड़ित मरीज को त्रिभुवन कीर्तिरस की एक-एक गोली तथा लक्ष्मीविलास रस की एक-एक गोली तीन बार लेनी चाहिए। इन दोनों दवाइयों को शहद के साथ लेने पर अधिक लाभ मिलेगा। प्लेटलेट्स की कमी को दूर करने के लिए डॉ. सिन्हा का कहना है कि गिलोय (गुडुची) का रस सुबह में दो चम्मच लेना चाहिए। उन्होंने बताया कि इसके साथ अदरक का रस व हल्दी का उपयोग अत्याधिक लाभदायक होगा। डॉ. सिन्हा का कहना है कि यदि महानगरों में लोगों को गिलोय न मिले तो दवा की दुकानों से अमृत सत्तू खरीद कर दिन में तीन बार दो-दो रत्ती लें। डॉ. सिन्हा का कहना है कि डेंगू पीड़ित मरीज को तेज बुखार व हड्डियों में तेज दर्द होता है। उन्होंने कहा कि हमारे देश में इस बीमारी को गांवों में हड्डी तोड़ बुखार कहा जाता है।

हरि भूमि, रोहतक
दिनांक 25 सितम्बर 2007 से उद्धृत

पहले मिल जाएगी मलेरिया की खबर

कोयंबटूर। मलेरिया जैसी बीमारियों के फैलने से पहले ही इसकी सूचना अब मिल सकेगी। भारतीय विश्व-विद्यालय में सेंटर ऑफ लाइफ साइंस ने डी.आर.डी.ओ. के सहयोग से महामारी की पूर्व सूचना देने वाला एक उपग्रह विकसित किया है। डी.आर.डी.ओ. के एक अधिकारी ने बताया कि इससे मलेरिया की रोकथाम में काफी मदद मिलेगी। विशेषकर उत्तर-पूर्वी राज्यों में जहां मलेरिया ने एक खतरनाक बीमारी का रूप धारण कर लिया है।

मुख्य नियंत्रक (लाइफ साइंसेज़ एंड ह्यूमन रिसोर्सेज़) डॉ. डब्ल्यू सेल्वामूर्थी ने बताया कि तेजपुर प्रयोगशाला ने इस रिमोट सेंसिंग मॉडल को मान्यता दे दी है और जल्द ही सेना में भी इसे भेजा जाएगा। डी.आर.डी.ओ. द्वारा चलाए जा रहे विभिन्न शोध कार्यक्रमों की समीक्षा करने के उद्देश्य से यहां आए सेलवामूर्थी ने कहा कि सैनिकों को मलेरियारोधी दवाएं पहले ही बांटी जा चुकी है।

भविष्य में होने वाली लड़ाइयों को पूरी तरह तकनीक आधारित बताते हुए उन्होंने कहा कि डी.आर.डी.ओ. 11वीं योजना के दौरान 300 करोड़ रुपये का निवेश करेगा। इससे केंद्र की ओर से सभी सुरक्षा आवश्यकताओं को पूरा किया जा सकेगा। पिछले दो दशकों में हुए शोध कार्यक्रमों की उपलब्धियों का ब्यौरा देते हुए उन्होंने कहा कि यूनिवर्सिटी ने एन.सी.सी. की महिला कैडेटों का एक राष्ट्रीय डाटाबेस तैयार किया है जो वायु सेना और थल सेना दोनों के लिए हथियारों और युद्ध के लिए जरूरी साजो-सामान के डिजाइन और सिस्टम बनाने में लाभदायक साबित होगा।

उन्होंने कहा कि केन्द्र ने पानी को जैविक तरीके से शुद्ध करने की एक तकनीक विकसित की है। इससे सैनिकों को शुद्ध पेय जल मिल सकेगा। हालांकि यह तकनीक अभी प्रयोगों के दौर से गुजर रही है। उन्होंने कहा कि डी.आर.डी.ओ. अपने संस्थान को किसी भी अन्य तरह के अन्तर्राष्ट्रीय संस्थान की तरह ही बनाना चाहता है ताकि पूरी दुनिया के वैज्ञानिक यहां आ सकें और विज्ञान के क्षेत्र में हो रहे नए-नए परिवर्तनों के बारे में एक दूसरे से बात कर सकें। उन्होंने यह भी बताया कि डी.आर.डी.ओ. और संस्थान आपसी तालमेल के साथ काम कर रहे हैं और यहां एक नॉलेज ग्रिड का निर्माण किया जाएगा। यहां वर्चुअल क्लासरूम के अलावा वीडियो कांफ्रेंस की सुविधा भी रहेगी।

अमर उजाला, कानपुर

दिनांक 4 नवम्बर 2007 से उद्धृत

मलेरिया और डेंगू का असर लिवर पर भी

चंडीगढ़। मलेरिया, डेंगू एवं टायफाइड का सीधा असर लीवर पर पड़ता है। अगर समय रहते इसकी पहचान नहीं की गई तो मरीज के लीवर में संक्रमण हो सकता है और इससे उसकी जान भी जा सकती है। यह बात पी.जी.आई. एवं एम्स के संयुक्त तत्वाधान में शनिवार को दो दिवसीय सेमिनार में डॉ. आशीष भल्ला ने कही। उन्होंने कहा कि अगर कोई व्यक्ति मलेरिया, टायफॉइड या डेंगू से पीड़ित है तो उसके लीवर में संक्रमण होने का खतरा बना रहता है। मानसून से पहले इन बीमारियों का खतरा बढ़ जाता है। व्यक्ति को लगातार बुखार रहता है। ऐसे व्यक्तियों को तुरंत जांच करानी चाहिए। तेज बुखार लीवर में संक्रमण की निशानी हो सकती है।

पाकिस्तान से आए करांची स्थित द आगा खां यूनिवर्सिटी के प्रो. सैयद हसनैन अली शाह ने कहा कि सब्जियों को बनाने से पहले अच्छी तरह से धोना चाहिए। ऐसा न करने पर सब्जियों पर जमी गंदगी व्यक्तियों के शरीर में चली जाती है। इसी कारण लोग बीमार पड़ते हैं और उन्हे हाइडेटिड लीवर डिजीज़ नामक बीमारी अपनी चपेट में ले लेती है और व्यक्ति का लीवर प्रभावित होता है। सेमिनार में एम्स, पी.जी.आई. एवं देश-विदेश के कई विशेषज्ञ मौजूद थे।

अमर उजाला, चण्डीगढ़

दिनांक 30 सितम्बर 2007 से उद्धृत

सेना ने तैयार किया एडिस मारने का कांटा

नई दिल्ली। अब तक सिर्फ मछली मारने के लिए कांटा डाला जाता था, लेकिन अब सेना ने मच्छर मारने के लिए भी कांटा तैयार कर लिया है। ओवी ट्रैप नामक इस तकनीक के जरिए एडिस मच्छरों को उसी तरह फंसाया जाएगा जिस तरह मछलियां कीड़े को देख कर कांटे में फंस जाती हैं। जाल में फंसे मच्छर जहरीली दवा से नष्ट हो जाएंगे। इस तकनीक को बुधवार से ट्रायल बेस पर दिल्ली के तीन जिलों में शुरू किया जाएगा। पूरी योजना का संचालन नेशनल इंस्टिट्यूट ऑफ मलेरिया रिसर्च की मदद से दिल्ली नगर निगम करेगा।

डेंगू व चिकनगुनिया जैसी बीमारियों को फैलाने वाले एडिस मच्छरों पर काबू पाने के लिए डिफेंस रिसर्च डिवेलपमेंट इस्टेब्लिशमेंट (डी.आर.डी.ई.) ने कई रसायनों की मदद से सी-21 नामक दवा तैयार की है, जिससे

एडिस मच्छर आकर्षित होंगे। इस दवा को एक बर्तन में आधा लीटर पानी भरकर डाल दिया जाएगा और बर्तन पर फिल्टर लगा दिया जाएगा। इसके साथ ही एक और पानी का बर्तन रखा जाएगा जिसमें मच्छरों के लार्वा के हार्मोन नष्ट करने वाली दवा इंसेक्ट ग्रोथ रेग्युलेटर डाली जाएगी। स्वास्थ्य विभाग के अधिकारियों का दावा है कि सी-21 दवा से एडिस मादा मच्छर आकर्षित होकर पानी के बर्तन पर आएंगी और उस पर फिल्टर लगे होने से प्रजनन के लिए दूसरे बर्तन के पानी में जाएंगी और उसमें डाली गई दवा के प्रभाव से लार्वे नष्ट हो जाएंगे। इससे न सिर्फ यह पता लगेगा कि मच्छरों का प्रजनन किस इलाके में कितना हो रहा है, बल्कि एक साथ ज्यादा से ज्यादा मच्छरों को नष्ट करने में भी सफलता मिलेगी।

दिल्ली नगर निगम के स्वास्थ्य अधिकारी डॉ. एन.के. यादव ने बताया कि योजना में केंद्रीय स्वास्थ्य मंत्रालय भी शामिल है और दिल्ली के साथ इसे बंगलौर व केरल में भी शुरू किया जा रहा है। दिल्ली में फिलहाल इसके लिए तीन जिलों को चुना गया है और योजना के सफल होने पर इसे देशभर में बड़े पैमाने पर लागू किया जाएगा। डॉ. यादव ने बताया कि इसके लिए थोड़ी-थोड़ी दूरी पर बहुत सारे बर्तन रखे जाएंगे जिसमें साफ पानी व दवा रखी जाएगी। विभाग के कर्मचारियों की मदद से बर्तन के पानी की सप्ताह में एक बार जांच की जाएगी और फिर पानी व दवा को बदला जाएगा। एडिस मच्छरों का 2004 के बाद आतंक तेजी से बढ़ा है। बचाव व रोकथाम के तमाम उपायों के बावजूद पिछले साल देश में हजारों लोग डेंगू व चिकनगुनिया की चपेट में आ गए थे और सैकड़ों की मौत हो गई थी।

नवभारत टाइम्स, नई दिल्ली
दिनांक 25 सितम्बर 2007 से उद्धृत

मलेरिया हेतु कारगर पौधे की प्रजाति विकसित

लखनऊ, 20 सितम्बर। केन्द्रीय औषधीय एवं सगंध पौधा संस्थान (सीमैप) ने मस्तिष्क को प्रभावित करने वाले मलेरिया ज्वर (सेरेब्रल मलेरिया) में कारगर औषधि को बनाने के लिए भारत में पहली बार एक औषधीय पौधे की प्रजाति विकसित की है तथा सीमैप के प्रयासों के द्वारा ही आज इस प्रजाति के पौधों की हजारों एकड़ भूमि पर खेती की जा रही है।

मस्तिष्क को प्रभावित करने वाले मलेरिया ज्वर की रोकथाम की औषधि बनाने के लिए चीनी पौधे *आर्टीमिसिया एनुआ* की प्रजाति के पौधे पहली बार भारत में विकसित किए गए हैं। *आर्टीमिसिया एनुआ* की पत्तियों से प्राप्त औषधीय तत्वों से सीमैप ने सी.डी.आर.आई. के सहयोग से मस्तिष्क को प्रभावित करने वाले ज्वर (सेरेब्रल मलेरिया) के उपचार के लिए एक कारगर औषधि विकसित की है। सीमैप के वैज्ञानिक डा. ए.के. सिंह ने बताया कि मलेरिया जो कि *प्लास्मोडियम फाल्सीपैरम* परजीवी द्वारा फैलता है, का भारत सहित कई अन्य देशों में प्रकोप जारी है। *आर्टीमिसिया एनुआ* से औषधीय तत्व आर्टीमिसिनिन की मलेरियारोधी क्षमता को चीनी वैज्ञानिकों ने खोजा था। आर्टीमिसिनिन जो कि एक कणदार यौगिक है को चीनी वैज्ञानिकों ने पौधे से निकाला एवं उसके गुण-दोषों को बताया।

भारत में यह पौधा सन् 1986 में क्यू इंग्लैंड के रायल बोटेनिक गार्डेन से सीमैप द्वारा लाया गया और इसकी समशीतोष्ण जलवायु में खेती करने के लिए पद्धतियां विकसित की गई है।

सीमैप के जैव ग्राम (बायो विलेज) योजना के तहत *आर्टीमिसिया एनुआ* की खेती 500 किसानों द्वारा लगभग दो हजार एकड़ भूमि पर की गई है तथा उत्तर प्रदेश व उत्तराखण्ड की तीन सहित छः दवा कम्पनियों द्वारा इसकी औषधि बनाई जा रही है। सीमैप के द्वारा जैव ग्राम में इस पौधे के माध्यम से किसान आर्थिक दृष्टि से इसकी खेती करने के लिए उत्सुक हो रहे हैं। अतः यह कहा जा सकता है कि वैज्ञानिक-उद्योग और किसान एक साथ मिलकर एक औषधीय पौधे के उत्पादन हेतु प्रयासरत हुए हैं।

स्वतंत्र भारत, लखनऊ
दिनांक 21 सितम्बर 2007 से उद्धृत